श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 10 अध्याय 25 — गोवर्धन-धारण

5 October 2026

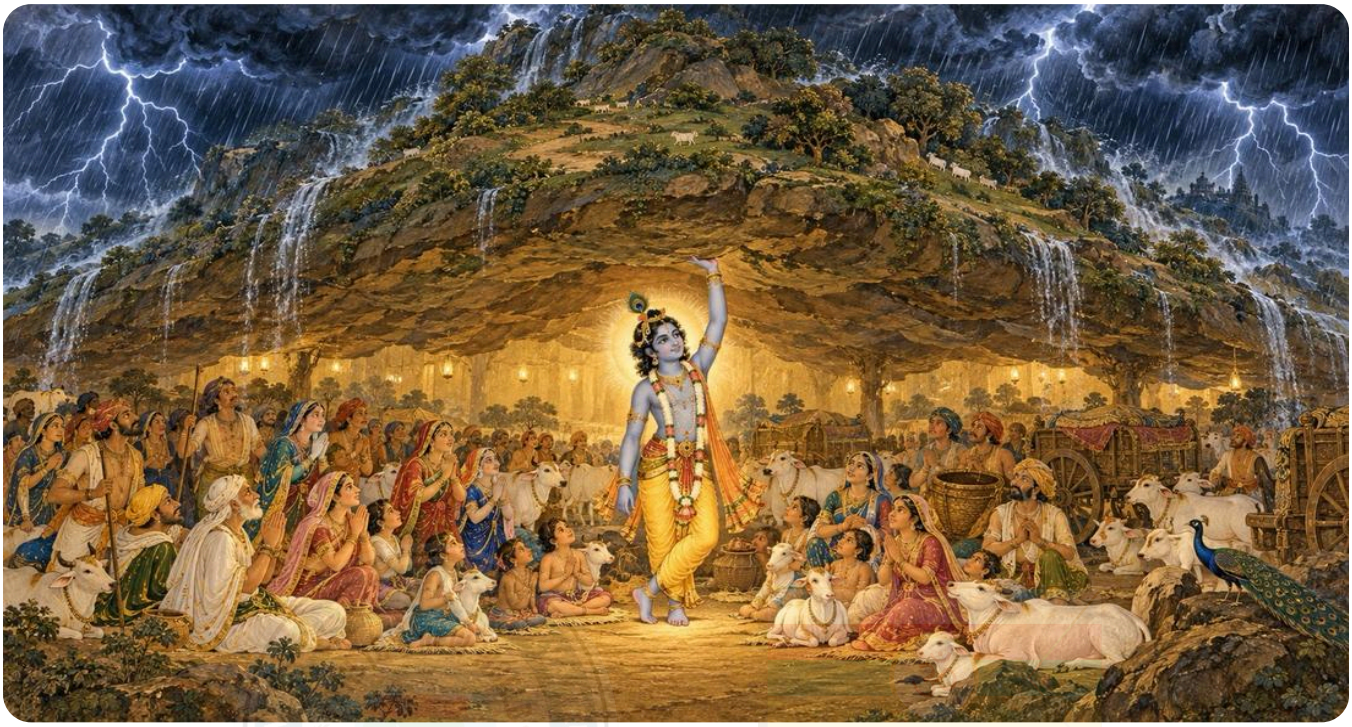

अभिमान में आहत इन्द्र व्रज पर प्रलय के मेघ छोड़ देते हैं — और प्रभु एक ही हाथ पर गोवर्धन पर्वत उठाकर सात दिन तक अचल खड़े रहते हैं, उन सब गोपों, बालकों और गौओं के ऊपर जो शरण के लिए उनके पास दौड़े आए हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज़्डम में पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की हमारी भक्तिमयी यात्रा। दशम स्कन्ध के इस पचीसवें अध्याय में स्वर्ग का राजा, अपना यज्ञ रोके जाने से क्रुद्ध होकर, नन्द के व्रज को डुबो देने के लिए सांवर्तक मेघों को आज्ञा देता है; ठिठुरते गोप कृष्ण के चरणों की शरण लेते हैं; और प्रभु उस विशाल पर्वत को ऐसे उठा लेते हैं जैसे कोई बालक छत्राक तोड़ ले, और उसे अपने जनों के ऊपर तब तक थामे रहते हैं जब तक इन्द्र का गर्व गल न जाए और सूर्य फिर से न चमक उठे।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 10 (दशम स्कन्ध, पूर्वार्ध)

- अध्याय: 25 (पञ्चविंश अध्याय)
- अध्याय शीर्षक: भगवान श्रीकृष्ण द्वारा गोवर्धन-धारण
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी (राजा परीक्षित को सुनाते हुए); कथा के भीतर इन्द्र और श्रीकृष्ण के वचन
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: नन्द का व्रज (गोकुल) और वृन्दावन में गोवर्धन पर्वत
- केंद्रीय विषय: अपनी पूजा रुकने पर इन्द्र का क्रोध; सांवर्तक मेघों का तूफ़ान; व्रज की कृष्ण-शरणागति; गोवर्धन-धारण और उसके नीचे सात दिन; इन्द्र का मान-भंग; व्रज और देवताओं का हर्ष
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 10, अध्याय 25, श्लोक 1–33
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, दशम स्कन्ध)

पूर्व अध्याय का संदर्भ

चौबीसवें अध्याय में कृष्ण ने नन्द और गोपों को प्रेमपूर्वक समझाया कि वे इन्द्र का वार्षिक यज्ञ छोड़कर गोवर्धन पर्वत, गौओं और ब्राह्मणों की पूजा करें। एक विराट् और अद्भुत रूप में उनकी भेंट स्वीकार करते हुए उन्होंने स्वयं घोषणा की, “मैं ही पर्वत हूँ,” और व्रजवासी गिरि को प्रणाम कर घर लौटे। यह जानकर इन्द्र ने क्या किया — यही इस अध्याय की कथा है।

इन्द्र का आहत अभिमान

शुकदेवजी ने कथा आगे बढ़ाई। जब इन्द्र को ज्ञात हुआ कि उसकी पूजा रोक दी गई है, तो वह नन्द और उन गोपों पर क्रोध से जल उठा जो कृष्ण को अपना रक्षक मानते थे। स्वयं को समस्त जगत् का ईश्वर समझने वाले उस क्रुद्ध देवराज ने सांवर्तक नामक मेघगण को बुलाया — वे मेघ जो ब्रह्माण्ड का प्रलय करते हैं और युग के अन्त तक बाँधकर रखे जाते हैं — और उन्हें आज्ञा दी। उसके पहले वचन रणनीति के नहीं, तिरस्कार के थे।

> अहो श्रीमदमाहात्म्यं गोपानां काननौकसाम् ।
> कृष्णं मर्त्यमुपाश्रित्य ये चक्रुर्देवहेलनम् ॥ ३ ॥

aho śrī-mada-māhātmyaṁ gopānāṁ kānanaukasām kṛṣṇaṁ martyam upāśritya ye cakrur deva-helanam

अर्थ: “अहो! इन वनवासी गोपों का धन-मद कितना बड़ा है! एक साधारण मनुष्य कृष्ण के भरोसे इन्होंने देवता का अपमान करने का साहस किया है।” (स्कन्ध 10, अध्याय 25, श्लोक 3)

“जैसे कर्मकाण्ड में आसक्त लोग,” इन्द्र आगे बोला, “आत्मज्ञान को त्यागकर नाममात्र की नौका जैसे यज्ञों के सहारे संसार-सागर पार करना चाहते हैं, वैसे ही इन गोपों ने कृष्ण की शरण लेकर मेरा अपराध किया है — एक वाचाल, मूर्ख, उद्धत और अज्ञानी मनुष्य, जो स्वयं को बड़ा पण्डित समझता है। समृद्धि से फूले और कृष्ण के उकसाए इन गोपों के धन-मद की अकड़ तोड़ दो, और इनके पशुओं का नाश कर दो। मैं स्वयं

अपने ऐरावत हाथी पर चढ़कर महाबली मरुद्गणों के साथ तुम्हारे पीछे-पीछे व्रज पहुँचूँगा, नन्द के गोकुल को मिटा देने के संकल्प से।" (श्लोक 4–7)

अपनी पूजा रुकने का समाचार पाकर अभिमानी इन्द्र प्रलयकारी सांवर्तक मेघों को बुलाता है और उन्हें नन्द के व्रज पर भेज देता है (श्लोक 1-7)।

व्रज पर प्रलय-मेघों की वर्षा

यह आज्ञा पाकर, और उन बन्धनों से छूटकर जो उन्हें संसार के अन्त तक रोके रखते थे, मेघ नन्द के गोकुल पर टूट पड़े और भयंकर वेग की मूसलाधार वर्षा से उसे पीड़ित करने लगे। बिजलियों से चमकते, गर्जना करते और प्रचण्ड वायु से प्रेरित वे ओले बरसाने लगे। खम्भों जैसी मोटी धाराएँ बिना रुके गिरती रहीं, यहाँ तक कि पृथ्वी ऐसी जलमग्न हो गई कि ऊँची-नीची भूमि का भेद ही न रहा। (श्लोक 8–10)

निरन्तर वर्षा और आँधी में काँपते, शीत से व्याकुल गौओं, गोपों और गोपियों के लिए कोई और ठिकाना न बचा — तब वे गौओं के रक्षक गोविन्द की ओर मुड़े और उन्हें अपनी शरण बनाया। वर्षा से बचने के लिए अपने सिर और अपने बच्चों को अपने ही शरीर से ढँकते हुए, थरथराते हुए, वे प्रभु के चरणतल में आए और प्रार्थना करने लगे। (श्लोक 11–12)

> कृष्ण कृष्ण महाभाग त्वन्नाथं गोकुलं प्रभो ।
> त्रातुमर्हसि देवान्न: कुपिताद् भक्तवत्सल ॥ १३ ॥

kṛṣṇa kṛṣṇa mahā-bhāga tvan-nātham gokulam prabho trātum arhasi devān naḥ kupitād bhakta-vatsala

अर्थ: "हे कृष्ण, हे कृष्ण, हे महाभाग प्रभु! हे भक्तवत्सल — इस गोकुल के स्वामी आप ही हैं; कुपित देवता से गौओं की और हमारी रक्षा कीजिए।" (स्कन्ध 10, अध्याय 25, श्लोक 13)

वर्षा और ओलों से पीड़ित, शीत से व्याकुल व्रज की गौएँ और गोप अपने बच्चों को अपने शरीर से ढँककर गोविन्द के चरणों की शरण लेते हैं (श्लोक 8-13)।

भगवान का संकल्प

ओलों और आँधी की मार से पशुओं को अचेत होते देख श्रीहरि समझ गए कि यह क्रुद्ध इन्द्र का किया हुआ है। उन्होंने विचार किया, "हमने उसका यज्ञ रोक दिया, इसलिए इन्द्र हमारे नाश के लिए यह असमय का, अत्यन्त उग्र ओलों और आँधी का तूफ़ान बरसा रहा है। मैं अपनी योगशक्ति से इसका पूरा प्रतिकार करूँगा, और उन देवताओं के धन-मद के अन्धकार को मिटा दूँगा जो मोहवश स्वयं को लोकों का स्वामी समझ बैठे हैं।" (श्लोक 14–16)

> न हि सद्भावयुक्तानां सुराणामीशविस्मय: ।
> मत्तोऽसतां मानभङ्ग: प्रशमायोपकल्पते ॥ १७ ॥

na hi sad-bhāva-yuktānāṁ surāṇām īśa-vismayaḥ matto 'satāṁ māna-bhaṅgaḥ praśamāyopakalpate

अर्थ: "सत्त्वगुण से युक्त देवताओं में सर्वेश्वर होने का अभिमान शोभा नहीं देता; और जब मेरे द्वारा दुष्टों का मान भंग होता है, तो वह उनकी शान्ति का ही कारण बनता है।" (स्कन्ध 10, अध्याय 25, श्लोक 17)

> तस्मान्मच्छरणं गोष्ठं मन्नाथं मत्परिग्रहम् ।
> गोपाये स्वात्मयोगेन सोऽयं मे व्रत आहित: ॥ १८ ॥

tasmān mac-charaṇaṁ goṣṭhaṁ man-nāthaṁ mat-parigraham gopāye svātma-yogena so 'yaṁ me vrata āhitaḥ

अर्थ: “इसलिए अपनी योगशक्ति से मैं इस गोप-समाज की रक्षा करूँगा, जिसने मेरी शरण ली है, जो मुझे ही अपना स्वामी मानता है और जो मेरा अपना परिवार है — क्योंकि यही मेरा लिया हुआ व्रत है।” (स्कन्ध 10, अध्याय 25, श्लोक 18)

प्रभु ने इन्द्र का यज्ञ रुकवाया ही क्यों, और अब वे केवल आकाश शान्त कर देने के बजाय स्वयं इस तूफ़ान का सामना क्यों करना चाहते हैं? इन्द्र और देवता सत्त्वगुणी हैं; स्वामित्व का घमण्ड उनमें शोभा नहीं देता, और पूजा तथा वैभव ने इन्द्र में जो अभिमान पाल दिया है, वह एक ऐसा अन्धकार है जिसे उसके अपने ही कल्याण के लिए हटाना आवश्यक है। प्रभु के हाथों होने वाला मान-भंग प्रतिशोध नहीं, औषधि है, और वे स्पष्ट कहते हैं कि इससे अभिमानी को शान्ति मिलती है। दूसरी ओर व्रजवासी हैं, जिनका उनके सिवा कोई आश्रय नहीं, जो उन्हें ही स्वामी मानते हैं, और जिन्हें वे अपना कुटुम्ब कहते हैं। बलवान के गर्व को तोड़ना और शरणागत को दिया वचन निभाना — कृष्ण के लिए ये दोनों एक ही अखण्ड कृपा हैं; जो हाथ पर्वत थामने वाला है, वही एक ही संकेत में इन्द्र को सुधारता और गोपों को ढँक लेता है।

गोवर्धन-धारण

> इत्युक्त्वैकेन हस्तेन कृत्वा गोवर्धनाचलम् ।
> दधार लीलया विष्णुश्छत्राकमिव बालक: ॥ १९ ॥

ity uktvaikena hastena kṛtvā govardhanācalam dadhāra līlayā viṣṇuś chatrākam iva bālakaḥ

अर्थ: ऐसा कहकर प्रभु ने एक हाथ से गोवर्धन पर्वत को उखाड़ लिया और उसे लीलापूर्वक ऐसे ऊपर थाम लिया जैसे कोई छोटा बालक छत्राक (कुकुरमुत्ता) उठा ले। (स्कन्ध 10, अध्याय 25, श्लोक 19)

फिर प्रभु ने गोपों को पुकारा, “हे माता, हे पिता, हे व्रजवासियो! आओ, अपनी गौओं सहित इस पर्वत के नीचे की खोह में सुखपूर्वक बैठ जाओ। यह भय मत करो कि पर्वत मेरे हाथ से गिर पड़ेगा; और आँधी-वर्षा का डर भी अब छोड़ दो, क्योंकि तुम्हारी रक्षा का प्रबन्ध हो चुका है।” कृष्ण के वचनों से आश्वस्त होकर वे अपने पशुधन, छकड़ों और सभी आश्रितों के साथ उस गुफा में प्रविष्ट हुए, और जिसे जहाँ स्थान मिला, वहीं बैठ गया। (श्लोक 20–22)

गिरि के नीचे सात दिन

> क्षुत्तृड्व्यथां सुखापेक्षां हित्वा तैर्व्रजवासिभि: ।
> वीक्ष्यमाणो दधाराद्रिं सप्ताहं नाचलत् पदात् ॥ २३ ॥

kṣut-tṛḍ-vyathāṁ sukhāpekṣāṁ hitvā tair vraja-vāsibhiḥ vīkṣyamāṇo dadhārādriṁ saptāhaṁ nācalat padāt

अर्थ: भूख-प्यास की पीड़ा और अपने सुख की चिन्ता छोड़कर टकटकी लगाए व्रजवासियों के देखते-देखते उन्होंने सात दिन तक पर्वत को थामे रखा और अपने स्थान से एक पग भी न हटे। (स्कन्ध 10, अध्याय 25, श्लोक 23)

वे दिन एक विचित्र माधुर्य के दिन थे: बाहर वर्षा गरजती रही, पर पर्वत के नीचे किसी को भूख-प्यास याद न रही, क्योंकि हर आँख उस बालक पर टिकी थी जो पहाड़ थामे खड़ा था। बहुत ऊपर इन्द्र भी देख रहा था — और जो उसने देखा, उसने उसका गर्व चूर कर दिया।

> कृष्णयोगानुभावं तं निशम्येन्द्रोऽतिविस्मित: ।
> निस्तम्भो भ्रष्टसङ्कल्प: स्वान्मेघान् सन्न्यवारयत् ॥ २४ ॥

kṛṣṇa-yogānubhāvaṁ taṁ niśamyendro 'ti-vismitaḥ nistambho bhraṣṭa-saṅkalpaḥ svān meghān sannyavārayat

अर्थ: कृष्ण की योगशक्ति का वह प्रभाव देखकर इन्द्र अत्यन्त विस्मित हुआ; उसका अभिमान जाता रहा, उसका संकल्प टूट गया, और उसने अपने मेघों को रोक लिया। (स्कन्ध 10, अध्याय 25, श्लोक 24)

कृष्ण की योगशक्ति से विस्मित इन्द्र का गर्व टूट जाता है और वह अपने मेघों को लौटा लेता है; आकाश निर्मल होता है और गोवर्धन पर सूर्योदय होता है (श्लोक 23-25)।

आकाश निर्मल हुआ, पर्वत यथास्थान रखा गया

आकाश को मेघरहित, सूर्य को उदित और प्रचण्ड आँधी-वर्षा को शान्त देखकर गोवर्धनधारी ने गोपों से कहा, “हे गोपो! अब भय त्यागकर अपनी स्त्रियों, धन और बच्चों सहित बाहर निकलो। तूफ़ान थम गया है और नदियों का जल लगभग उतर चुका है।” गोप धीरे-धीरे बाहर आए — हर कोई अपनी-अपनी गौएँ समेटे, अपना सामान छकड़ों पर लादे, साथ में स्त्रियाँ, बच्चे और वृद्ध। और सर्वशक्तिमान प्रभु ने, समस्त प्राणियों के विस्मय से देखते-देखते, लीलापूर्वक पर्वत को उसके अपने स्थान पर ठीक वैसे ही रख दिया जैसा वह पहले था। (श्लोक 25–28)

व्रज का प्रेम और देवताओं की स्तुति

तब प्रेम अपने तट तोड़कर उमड़ पड़ा। व्रजवासी दौड़कर उनके पास आए और स्नेह की हर कोमल चेष्टा से उन्हें गले लगाया; गोपियों ने भरे हृदय से दही और अक्षत छिड़ककर उनकी पूजा की और उन पर अपने श्रेष्ठ आशीर्वाद बरसाए। यशोदा, रोहिणी, नन्द और बलवानों में श्रेष्ठ बलराम ने स्नेह से विह्वल होकर कृष्ण को हृदय से लगाया और आशीष दिए। स्वर्ग में देवगण, सिद्ध, साध्य, गन्धर्व और चारण उनकी स्तुति करते हुए पुष्पवर्षा करने लगे; देवताओं की प्रेरणा से शंख और दुन्दुभियाँ बज उठीं, और तुम्बुरु के नेतृत्व में गन्धर्वराज गाने लगे। फिर, हे राजन्, अपने अनुरागी गोपों से घिरे और बलराम के साथ श्रीहरि व्रज लौट आए, और गोपियाँ उनके इन हृदयस्पर्शी कर्मों का गान करती हुई आनन्दपूर्वक अपने घरों को गईं। (श्लोक 29–33)

पर्वत के यथास्थान रख दिए जाने पर व्रज उमड़ते प्रेम से कृष्ण को गले लगाता है, देवता पुष्प बरसाते हैं और गन्धर्व गाते हैं (श्लोक 28-33)।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. अभिमान देवताओं को भी अन्धा कर सकता है। सत्त्वगुणी देवराज इन्द्र जगदीश्वर को देखकर भी उनमें केवल “एक साधारण मनुष्य” देखता है (श्लोक 3)। धन और सम्मान जब घमण्ड पैदा करते हैं, तो ऊँचे-से-ऊँचे प्राणियों की दृष्टि भी धुँधली हो जाती है।

2. संकट में भक्त प्रभु की ओर दौड़ता है। गोप न तो इन्द्र को कोसते हैं, न उसे मनाने की युक्ति सोचते हैं; वे अपने बच्चों को अपने शरीर से ढँककर कृष्ण के चरणों में चले आते हैं (श्लोक 13)। संकट में शरणागति भक्त की पहली प्रतिक्रिया है, अन्तिम नहीं।

3. प्रभु का दण्ड उनकी कृपा है। कृष्ण घोषित करते हैं कि अभिमानियों का मान तोड़ना उनकी शान्ति का कारण बनता है (श्लोक 17)। जब प्रभु हमें झुकाते हैं, तो वे हमें दण्ड नहीं देते — वे हमें उस भ्रम से मुक्त करते हैं कि हम अपने संसार के स्वामी हैं।

4. जिन्होंने उन्हें ही अपना एकमात्र आश्रय बनाया, उनकी रक्षा वे करते हैं। प्रभु व्रज को अपना शरणागत, अपना आश्रित और अपना परिवार कहते हैं, और उसकी रक्षा को अपना व्रत बताते हैं (श्लोक 18)। जो केवल उन पर टिका है, वह कभी नहीं छोड़ा जाता।

5. भगवान के महानतम कर्म भी लीला हैं। पर्वत ऐसे उठता है जैसे बालक छत्राक उठा ले (श्लोक 19), और उतनी ही सहजता से वापस रख दिया जाता है। जो हमारे लिए असम्भव है, वह उनके लिए सहज लीला है; हमारा काम बस विश्वास करना है।

6. प्रेम स्वयं को भूल जाता है। सात दिन तक व्रजवासी कृष्ण को निहारते हुए भूख, प्यास और सुख-सुविधा भूल गए (श्लोक 23)। जहाँ हृदय प्रभु में लगा हो, वहाँ शरीर की माँगें मौन हो जाती हैं।

एक भक्तिमय चिन्तन

इस अध्याय में जो हमें सबसे अधिक द्रवित करता है, वह पर्वत का आकार नहीं, उसके नीचे के हाथ की लघुता है। कीचड़ में नंगे पाँव खड़ा व्रज का एक बालक एक पहाड़ थामे है, जबकि आकाश अपना सारा जल पृथ्वी पर उँडेल रहा है — और वह यह सब श्रम से नहीं, मुस्कान से करता है, जैसे कोई बालक अपना पाया हुआ छत्राक दिखा रहा हो। इन्द्र के क्रोध का उत्तर प्रति-प्रहार से नहीं, आश्रय से दिया जाता है। देवताओं का मोह भरी सभा में अपमानित करके नहीं, बल्कि वर्षा के एक शान्त सप्ताह में दूर किया जाता है, जिसमें एक अभिमानी राजा धीरे-धीरे समझता है कि वह किससे लड़ रहा था। और गोप, जो भाग सकते थे या सौदा कर सकते थे, वही एक काम करते हैं जिससे यह सारा चमत्कार सम्भव होता है: वे उनके चरणों में आ जाते हैं। हम भी ऐसे आकाशों के नीचे जीते हैं जिन पर हमारा वश नहीं, और गोवर्धन हमें याद दिलाता है कि प्रश्न कभी यह नहीं होता कि वर्षा आएगी या नहीं, बल्कि यह कि जब वह आए तो हम कहाँ खड़े होंगे। उनके हाथ के नीचे भूख-प्यास भूल जाती है, और तूफ़ान भी उन्हें कुछ देर और निहारने का बहाना बन जाता है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज जब भी चिन्ता उठे — धन, स्वास्थ्य या दूसरों की राय को लेकर — एक क्षण रुकें और गोवर्धन के नीचे की खोह की कल्पना करें। अपने परिवार और अपनी चिन्ताओं सहित स्वयं को वहाँ बिठाएँ, और उस हाथ की ओर देखें जो पर्वत थामे है। मन ही मन गोपों की प्रार्थना कहें: “इस गोकुल के स्वामी आप ही हैं।” चिन्ता रहे तो रहे, पर वह आपके सिर के ऊपर नहीं, उनके आश्रय के नीचे रहे। इस क्षण का समापन धीरे-धीरे जपकर करें: ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

उपसंहार

दशम स्कन्ध का यह पचीसवाँ अध्याय स्वर्ग के अभिमान और व्रज की शरणागति को आमने-सामने रखता है, और दिखाता है कि प्रभु दोनों का उत्तर एक ही संकेत से देते हैं। इन्द्र के प्रलय-मेघ बल से नहीं, एक सप्ताह तक उठाए हुए पर्वत के दर्शन से शान्त होते हैं; कृष्ण के चरण खोजने वाले गोप उसके नीचे सूखे बच जाते हैं; और जिस देवता ने उन्हें मनुष्य कहा था, वह विस्मित और नम्र होकर रह जाता है, उसका घमण्ड उसके ही भले के लिए धुल जाता है। हम व्रजवासियों से यह सीखें कि हर तूफ़ान में प्रभु का आश्रय हमारा पहला विचार हो, और इन्द्र से यह कि जो भी अभिमान हमारे और शान्ति के बीच खड़ा है, उसे वे प्रेमपूर्वक तोड़ दें।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी), दशम स्कन्ध (पूर्वार्ध), पञ्चविंश अध्याय।
- श्रृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़्डम · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में प्रस्तुत हैं। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संबंध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-25-krishna-lifts-govardhana-hill-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज़्डम · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट